भारत विभाजन पर आधारित उपन्यासों का परिचय

डॉ0 पुष्पा महाराज*
प्रियम्बदा*

स्वतन्त्र भारत का उदय विभाजन के साथ हुआ। यह प्रथम अवसर था, जब धर्म के नाम पर संस्कृति को बाँटने का प्रयत्न किया गया और कहा गया कि मुसलमानों के लिए एक पृथक् राष्ट्र 'पाकिस्तान' होगा। भारत ने धर्म निरपेक्ष स्वरूप अपनाया, जिसमें सभी धर्मों के लोगों को समान अधिकार दिये गये। विभाजन ने सदियों से साथ–साथ रहते लोगों के लिए अपना अलग राष्ट्र चुनने का विकल्प दिया था, जो व्यावहारिक स्तर पर बेमानी सिद्ध हुआ। विभाजन की विभीषिका के बाद भारत में हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धों में नये आयाम देखे गये। ये आयाम सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर रेखांकित किये गये। हिन्दी के कई साहित्यकारों ने अपने उपन्यासों की कथावस्तु ऐसे वातावरण से ग्रहण की और इन सम्बन्धों के विविध रूपों को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया।

स्वतन्त्र भारत के कुछ प्रमुख उपन्यासों में अभिव्यक्त हिन्दू–मुसलमान सम्बन्ध एवं विभाजन को इस पृष्ठभूमि में देखना और भी प्रासंगिक होगा। स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद लिखे गये कुछ प्रमुख उपन्यास इस प्रकार हैं, जिनमें हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धों का विविध स्तरों पर चित्रण हुआ है–

1. और इन्सान मर गया : रामानन्द सागर (1948 ई.)
2. झूठा सच : यशपाल (1958 ई.)
3. सती मैया का चौरा : भैरवप्रसाद गुप्त (1959 ई.)
4. लौटे हुए मुसाफिर : कमलेश्वर (1961 ई.)
5. काला जल : गुलशेर खाँ शानी (1965 ई.)
6. अलग–अलग वैतरणी : शिवप्रसाद सिंह (1967 ई.)
7. तमस : भीष्म साहनी (1973 ई.)
8. छाको की वापसी बदीउज्ज़माँ (1975 ई.)
9. झीनी–झीनी बनी चदरिया : अब्दुल बिस्मिल्लाह (1986ई.)
10. सूखा बरगद : मंजूर एहतेशाम (1986 ई.)
11. शहर में क़र्यू : विभूति नारायण राय (1988ई.)
12. वे वहाँ कैद हैं : प्रियंवद (1994ई.)
13. आधा गाँव : राही मासूम रज़ा (2002)
14. कितने पाकिस्तान : कमलेश्वर (2006)
15. गुजरा हुआ जमाना : कृष्ण बलदेव वैद्य (2002)

और इंसान मर गया – स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद विभाजन के दर्द एवं हिन्दू–मुसलमान द्वंद्व की विभीषिका को रेखांकित करता हुआ हिन्दी का प्रथम उपन्यास रामानन्द सागर ने 'और इन्सान मर गया' नाम से लिखा इससे पूर्व वे उर्दू में लिखते थे। ''सागर उर्दू के लिए पुराने पर हिन्दी के लिए नये हैं।'' इस उपन्यास में विभाजन के बाद लाहौर में हुए दंगों, उनके प्रभाव एवं विस्थापन के दौरान मानवीयता को स्वार्थ–तले दबते–कुचलते दिखाया गया है। ''यह कथा भारत–पाक विभाजन के समय की यथार्थ स्थिति का चित्रण करती है। चारों ओर फैली हिंसा, घृणा, घायल मानवता, शारीरिक, मानसिक व आत्मिक रूप से टूटन आदि वस्तुस्थितियों का सजीव अंकन किया गया है।''

2. झूठा सच (1958ई.) :–यशपाल रचित दो खण्डों में झूठा सच भारत के विभाजन की त्रासदी एवं हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धों की व्याख्या करने वाला महत्त्वपूर्ण उपन्यास है। हरिमोहन शर्मा इसे 'विभाजन की त्रासदी की महागाथा' के अतिरिक्त ''बीसवीं शताब्दी के चौथे–पाँचवे दशक के हिन्दुस्तानी जीवन की लय, उसकी मार्मिक और प्रामाणिक छवि प्रस्तुत'' करने वाला उपन्यास मानते हैं। यशपाल ने इस उपन्यास में देश के बँटवारे के समय और उसके पहले तथा बाद में साम्प्रदायिक विभीषिका में जलते लोगों का मार्मिक चित्रण किया है।

लाहौर के भोला–पांधे की गली से झूठा सच की कथा शुरू होती है और आजादी की विभीषिका का साक्षात् कराती तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक जीवन का आईना बनती है। इस उपन्यास का प्रथम खण्ड 'वतन और देश' तथा द्वितीय खण्ड 'देश का भविष्य' नाम से आया। ''वतन और देश' नाम सम्भवतः दिया ही इसलिए गया है कि वतन लाहौर में लम्बे समय से रह रही हिन्दू–मुसलमानों की पीढ़ियाँ, एक–दूसरे के दुःख–दर्द में काम आती, एक–दूसरे से घुलती–मिलती, एक ऐसे स्वतः स्फूर्त समग्र समाज का निर्माण किये हुए थीं– जिससे अलग होने की कल्पना स्वप्न में भी नहीं की जा सकती थी।'' लेकिन परिस्थितियाँ ऐसी बनीं कि 'वतन' तो छूटा ही, लम्बे समय से साथ–साथ जीते आ रहे सहअस्तित्व एवं भाईचारे का सूत्र भी टूट गया।

3. सती मैया का चौरा (1950 ई.) :–भैरवप्रसाद गुप्त का यह उपन्यास मन्ने एवं मुन्नी दो पात्रों के बहाने एक गाँव की तीन पीढ़ियों की कथा कहता है और सामन्ती

***शोध निदेशक एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग महिला कॉलेज, डालमियानगर वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा।**
***शोध छात्रा हिन्दी विभाग वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा**

व्यवस्था के विघटन एवं नयी समाजवादी व्यवस्था के निर्मिति की कथा कहता है। 'सती मैया का चौरा' मन्ने एवं मुन्नी दो मित्रों की कथा है। मन्ने मुसलमान है और सामन्ती व्यवस्था का भग्नावशेष, मुन्नी हिन्दू है और एक सुलझा हुआ समाजवादी। दोनों की मित्रता एक ऐसी गुत्थी सुलझाते हुए होती है, जो हिंदुओं एवं मुसलमानों में अलग–अलग अवधारणाओं के साथ व्याप्त है। यह गुत्थी है तम्बाकू की फसल को लेकर। उनके पहले परिचय का वार्तालाप हिन्दू–मुसलमान मनोग्रन्थि को सहजता से प्रकट करता है–

''दुत ! वे तो रोएँ हैं–कहकर वह हँस पड़ा।
–नयी, ये गाय के बाल हैं।–उस लड़के ने आँखे मटकाते हुए कहा।
–लेकिन मैं तो सुअर के बाल खोज रहा हूँ।
–तो क्या तुम मुसलमान हो? उस लड़के ने कहा।''

मन्ने के पिता मियाँ गाँव की छीजती ज़मींदारी व्यवस्था के प्रतिनिधि हैं। उनके लिए मनुष्यता का बोध सर्वोपरि है इसलिए हिन्दू–मुसलमान ज़्यादा महत्त्व नहीं रखता है। वे मन्ने एवं मुन्नी की मित्रता को सहजता से स्वीकार कर लेते हैं और मन्ने की 'हिन्दी' पढ़ने की इच्छा को धार्मिक संकीर्णता के दायरे से बाहर रखकर देखते हैं। कैलसिया की इज़्ज़त ख़राब होने पर वे न सिर्फ़ उसे शरण देते हैं, सम्मान का पात्र बनाते हैं, अपितु अन्याय के प्रतिकार हेतु मानवीयता का साथ धर्म के मामले से ऊपर उठकर देते हैं।

4. लौटे हुए मुसाफ़िर (1961 ई.) :–कमलेश्वर रचित 'लौटे हुए मुसाफ़िर ''साम्प्रदायिकता पर चोट करने वाला अपने ढंग का एक अनूठा उपन्यास'' है। इस उपन्यास में कमलेश्वर ने एक ऐसी बस्ती में रहनेवाले लोगों को लेकर कथानक बुना है, जिसने ''अट्ठारह सौ सत्तावन में अंग्रेज़ों से लोहा लिया था। हर क़ौम और मज़हब के लोगों ने कन्धे–से–कन्धा मिलाकर गोलियों की बौछार सीनों पर झेली थी।'' इस बस्ती का सामाजिक ताना–बाना कुछ ऐसा था कि ''जब रामलीला का विमान उठता था, तो मुसलमान औरतें दरवाज़ों की चिकें या बोरों के पर्दे उलटकर मूर्तियों के श्रृंगार की तारीफ़ करती थीं और उनके बच्चे विमान के साथ दूर तक शोर मचाते हुए आया करते थे–बोल राजा रामचन्द्र की जै! लेकिन सिर्फ़ नफ़रत की आग ने इस बस्ती को जलाया था।''

कमलेश्वर इंगित करते हैं कि ''असली लड़ाई तो अमीरी और गरीबी की है। मुल्क़ के तकसीम होने से हमें क्या मिल जायेगा।'' वे मानते हैं कि मूल समस्या आर्थिक है, क्योंकि साम्प्रदायिक हवा के बस्ती में प्रवेश करने पर इतिख़ार को 'चौथी सवारी' मात्र इसलिए नहीं मिलती कि वह मुसलमान है। वह इक्का नहीं निकालता और रोज़ी–रोटी से हाथ धो बैठता है। देश–विभाजन इस उपन्यास का

महत्त्वपूर्ण कथा अंश है।''कमलेश्वर ने विभाजन की घटना के माध्यम से वास्तव में इन्सानी रिश्तो के मानवीय मानदण्डों की खोज की है। यह ख़ोज इतिख़ार, सत्तार और सलमा–इन तीनों में मिलती है। तीनों ही धार्मिक और साम्प्रदायिक संकुचितता से परे मानवीय बोध के धरातल पर स्थित हैं। पूरे उपन्यास में नसीबन मानवतावादी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करती है। नसीबन न हिन्दू है न मुसलमान। वह बस्ती की रहने वाली है और एक माँ है। इसीलिए बस्ती में रहनेवाले हर व्यक्ति के प्रति उसके मन में ममत्व है चाहे व हिन्दू हो या मुसलमान। यह बच्चन के बच्चों को भी उतना ही चाहती है, जितना ख़ुद अपने बच्चे को। उसका यह ममत्व साम्प्रदायिकता की संकुचितता से ऊपर मानवीयता के धरातल पर स्थित है। नसीबन के लिए धर्म, सम्प्रदाय, रंग और जाति की बाहरी पहचानों का कोई महत्त्व नहीं है। उसके लिए इन्सान का महत्व है।

5. काला जल (1965 ई.) :–गुलेशर खाँ शानी का उपन्यास 'काला जल' बस्तर जिला के जगदलपुर कस्बे में स्थित दो मुस्लिम परिवारों की तीन पीढ़ियों की कथा कहता है। यह कथा सन् 1910 ई. आस–पास से आरम्भ होकर स्वतन्त्रता–प्राप्ति के कुछ वर्ष बाद तक चलती है। यों तो वह उपन्यास ''निम्न मध्यमवर्गीय मुस्लिम समाज का अत्यन्त प्रामाणिक दस्तावेज है'' तथापित इसमें हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धों के विभिन्न आयाम दिखते है। दो परिवारों के तीन पीढ़ियों की कथा कहने के लिए शानी ने मुसलमानों के एक ऐसे त्योहार शब–ए–बारात की रस्म फातिहा का आश्रय लिया है जो हिन्दुओं के पिण्डदान की प्रथा से साम्य रखती है।

शानी ने करामात बेग एवं बी–दारोगिन के सम्बन्ध को हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धा के एक महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में चित्रित किया है। बी–दारोगिन पहले बिट्टी रौताइन यानी कि हिन्दू थीं। लेकिन कारामात बेग के प्रेम में इस्लाम–बी हो जाती हैं। घर में उनका रोब–दाब करामात बेग की दूसरी पत्नी, जो मुसलमान है; के आ जाने के बाद भी चलता रहता है। इस विशिष्ट तथ्य की ओर कि धर्म परिवर्तित हो जाने मात्र से संसकार नहीं बदल जाते, लेखक ने इंगित किया है कि बिट्टी रौताइन इस्लाम–बी होने के बावजूद बिट्टी बनी रहती हैं–''सुनने में यह बात अजीब–सी लगती है, लेकिन ऊपर से चाहे वह बी–दारोगिन या इस्लाम–बी हों, भीतर से अन्त तक वह बिट्टी ही बनी रहीं उनके अपने लकड़ी के सन्दूक (जिसमें सारे जेवर और पैसे रहते) के पल्ले में लक्ष्मी की तस्वीर आखिर तक चिपकी रही और नहाने के बाद कमरा बन्द करके लक्ष्मी पूजा करना उन्होंने कभी बन्द नहीं किया।'' कहने का तात्पर्य यह कि धर्म–परिवर्तन हो जाने मात्र से ही व्यक्ति के संस्कार परिवर्तित नहीं हो जाते।

6. अलग अलग वैतरणी (1967 ई.) :–शिवप्रसाद सिंह की ख्याति हिन्दी में कहानीकार और उपन्यासकार के रूप में है। उन्होंने उपन्यास लेखन की शुरूआत

'अलग–अलग वैतरणी' से की थी। वे लिखते हैं–''अलग–अलग वैतरणी स्वतन्त्रता के बाद के बीस वर्षों की, यानी दो दशक की उस दारूण कथा को आपके सामने लाती है, जहाँ गाँव का पूरा कलेवर जर्जर होकर टूट–टूटकर बिखर रहा है। वे रिश्ते–नाते ख़तम हो गये, वे सम्बन्ध में खण्डित हो गये, जहाँ अब हर इन्सान अपनी–अपनी वैतरणी में डूबने–उतराने का अभिशाप लिये गाँव की वृहत् वैतरणी को अपनी स्याह ज़िन्दगी से ढँकता चला आ रहा है।''

7. तमस (1973 ई.) :–औपनिवेशिक शासन–व्यवस्था के अराजक स्वरूप एवं साम्प्रदायिकता की त्रासदी को रेखांकित करने वाला भीष्म साहनी रचित 'तमस' हिन्दू–मुसलमान सम्बन्ध को विश्लेषित करने की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है। तमस का अर्थ अंधकार हाता है। ''तमस को ध्यानपूर्वक पढ़ने पर इस अंधकार की ढेरों व्यंजनाएँ अपने–अपने आशयों के साथ जेहन में आती हैं। यह तमस सदियों से, आम हिन्दू–मुसलमानों के मन में धीरे–धीरे जनम लेने, पनपने और पल्लवित होने वाले संदेह, अविश्वास, अलगाव, नफ़रत, और विद्वेष का तमस भी है और सदियों से एक साथ रहते हुए भी एक–दूसरे के जीवन से गहरे अपरिचय का तमस भी, नफ़रत, घृणा और विद्वेष जिसके स्वभाविक परिणाम हैं।''

तमस का औपन्यासिक काल–विस्तार पाँच दिनों का है। इस अवधि में मुराद अली के कहने पर नत्थू चमार एक सुअर मारता है और जो सुबह होते ही मस्जिद की सीढ़ियों पर पहुँचा दिया जाता है। उसी समय मुसलमान समुदाय में अभी सुगबुगाहट उठ ही रही होती है कि एक गाय काट डाली जाती है। अवसरवादी साम्प्रदायिक ताक़तें इन अवसरों पर सक्रिय हो जाती हैं। एक–दूसरे पर आरोप–प्रत्यारोप शुरू हो जाते हैं और 'धर्म' पर 'संकट' आ जाता है। हिन्दुओं की ओर से वानप्रस्थी जी एवं मुसलमानों की ओर से हयातबख्श इस संकट से निपटने के लिए युवकों को तैयार करते हैं। शहर में दंगे फैल जाते हैं। दंगों की यह आग गांव को भी अपने चपेट में ले लेती हैं। अन्ततः एक भयानक तबाही के बाद अंग्रेज़ हाकिम के हस्तक्षेप से दंगे रूक जाते हैं, लेकिन सैकड़ों वर्षों से साथ–साथ रह रहे लोगों में शक, संदेह एवं अविश्वास के बीज को गहरे तक ले जाते हैं।

8. छाको की वापसी (1975ई.) :–बदीउज्जमाँ का उपन्यास 'छाको की वापसी' उत्तम पुरूष में लिखा गया ऐसा उपन्यास है, जिसमें छाको नामक एक ग़रीब मुसलमान द्वारा रोज़ी–रोटी की तलाश में धोखे से पूर्वी पाकिस्तान जाने एवं कालान्तर में बँगलादेशी बन जाने के बाद वापस लौटने की कथा है। 'छाको की वापसी' उपन्यास की विशिष्टता इस तथ्य में अन्तर्निहित है कि छाको की त्रासदी के माध्यम से बदीउज्जमाँ उन बेबस व बेजुबान मुसलमानों को जुबान देते हैं, जो पाकिस्तान के तूफ़ान में तिनके के मानिन्द उड़कर वहाँ पहुँच गये थे। साथ ही वदीउज़्जमाँ

पाकिस्तान विमर्श को पूर्वी पाकिस्तान का सन्दर्भ प्रदान करते हैं, ''जो एक धर्म, एक संस्कृति व एक देश' के तर्क को बँगलादेश के उदय से झुठलाता है।'' छाको की वापसी' में पहली बार विभाजन के दर्द को पूर्वी पाकिस्तान का सन्दर्भ दिया गया है।

उपन्यास का प्रमुख पात्र छाको है। यह अपने पिता से नाराज़ होकर इलाही मास्टर के यहाँ टेलरिंग का काम करता है। इलाही मास्टर उसे काम के लालच में पूर्वी पाकिस्तान (ढाका) लिवा जाते हैं और धोखे से पाकिस्तान का नागरिक बनवा देते हैं। दूर देश में छाको अपने परिवार, गाँव, समाज को बहुत शिद्दत से यात करता है। उसके लिखे पत्रों में गाँव की अनेकशः स्मृतियाँ हैं जिनमें मुहर्रम–जैसे त्योहारों की सूक्ष्मतम बातें हैं। वह अपने पत्रों में बार–बार गाँव लौटने का उल्लेख करता है। एक माह का बीजा पाकर जब वह वापस लौटता है, तो चाहता है कि वापस न जाना पड़े। इसके लिए वह हर सम्भव प्रयास करता है, लेकिन असफल रहता है। अगली बार भारत आने तक पूर्वी पाकिस्तान बँगलादेश बन चुका होता है और वह बँगलादेशी। 'छाको की वापसी' हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धों को अपनी यथार्थता में चित्रित करती है और छाको की त्रासदी को सांस्कृतिक प्रश्न की तरह उठाती है।

9. झीनी–झीनी बीनी चदरिया (1986 ई.):–अब्दुल बिस्मिल्लाह का प्रसिद्ध उपन्यास झीनी–झीनी बीनी चदरिया बनारस के बुनकर समाज को केन्द्र में रखकर लिखा गया है।

'झीनी–झीनी बीनी चदरिया' में बनारस अपनी पूरी सांस्कृतिक संकल्पनाओं के साथ उपस्थित है। अपने सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों के कारण बनारस सदैव ही साम्प्रदायिक झंझावतों को सहज ही झेल लेता है। उपन्यास का प्रमुख पात्र मतीन बहुत सहिष्णु है। लेखक ने मतीन का उदाहरण देकर बताने की कोशिश की है कि संवेदनशीन मुद्दों (होली पर रंग डालने–जैसी) पर भी यदि संयम से काम लिया जाय, तो धर्म के नाम पर होनेवाली तबाही से बचा जा सकता है।

10. सूखा बरगद (1986 ई.) :–मंजूर एहतेशाम का प्रसिद्ध उपन्यास 'सूखा बरगद' हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धों की समस्याओं की गहन छानबीन करता है और गहरे स्तर तक इन्हें खोलने की कोशिश करता है एवं सफल भी होता है। 'सूखा बरगद' अब्दुल वहीद खाँ का प्रतीक है, जो धार्मिक संकीर्णताओं से मुक्त हें। वे धर्म से ज्यादा महत्त्व मानवीयता को देते हैं ओर सच्चे देशभक्त हैं। वे आजीवन कट्टरपन्थियों से जूझते रहते हैं तथा सामाजिक दबाव उन्हें पराजित नहीं कर पाते। आर्थिक तंगी भी उन्हें झुका नहीं पाती। वे देश–विभाजन के बाद पाकिस्तान नहीं जाते, क्योकि वे भारत अपना देश मानते हैं और अजनबी देश में रहना उन्हें अपनी जड़ों से काट देता।

11. शहर में कर्यू (1988 ई.) :–विभूतिनारायण राय के उपन्यास 'शहर में कर्यू' में 'तमस' (भीष्म साहनी) की तरह कर्यू के दो–तीन दिन की यातनामय स्थितियों को बेहद वस्तुगतता किन्तु मानवीयता के साथ चित्रित किया गया है।

'शहर में कर्यू' उपन्यास का आरम्भ इलाहाबाद के कुछ क्षेत्रों में कर्यू लगने से होती हे। लेखक के अनुसार–''शहर में कर्यू अचानक नहीं लग था, पिछले एक हफ्ते से शहर का वह भाग, जहाँ हर दूसरे–तीसरे साल कर्यू लग जाया करता है, इसके लिए जिस्मानी और मानसिक तौर पर अपने को तैयार कर रहा था।'' इस कर्यू के पीछे वह दंगा था, जो कुछ देर पहले शुरू हुआ था। दंगा पूरी तरह सुनियोजित एवं योजनाबद्ध था। ''तीन–चार लड़के मिर्जागालिब रोड, जी. टी. रोड क्रासिंग पर बैंक ऑफ बडौदा के पास एक गली से निकले और गाड़ीवान टोला के पास एक मन्दिर की दीवाल पर बम पटककर वापस उसी गली में भाग गये।... बम चूँकि मन्दिर की दीवाल पर फेंका गया था इसलिए उस समय वहाँ मौजूद हिन्दुओं ने मान लिया कि बम फेंकनेवाले मुसलमान रहे होंगे, इसलिए उन्होंने एकदम से वहाँ गुजरनेवाले मुसलमानों पर हमला कर दिया।''

12. वे वहाँ कैद हैं (1994 ई.) :–प्रियंवद का उपन्यास 'वे वहाँ कैद हैं' हिन्दू साम्प्रदायिकता के उभार को केन्द्र में रखकार उसके दुष्परिणामों को रेखांकित करता है। प्रियंवद 20वीं शताब्दी के बदलते सामाजिक–राजनीतिक हालात से आ रहे परिवर्तन से चिन्तित हैं। वे मानते हैं कि भारतीय इतिहास का स्वरूप समन्वयवादी था–''यहाँ के साधारण मनुष्य की चेतना, विवेक पर मुझे पूरा विश्वास था, राजनीति उसे भ्रमित नहीं करती थी, वह बहुत ही सूक्ष्म एवं मूक तरीके से अपनी धर्म निरपेक्षता के साथ समाज में जीता रहा था। उसने इन सैकड़ों सालों में मुसलमानों के साथ समन्व की अपनी संस्कृति विकसित कर ली थी।'' लेकिन 90 के दशक के हिन्दू उभार ने कई मिथक उभारे, मसलन– ''हिन्दू स्वभाव से करूणामय होता है, जबकि मुसलमान बच्चे को बचपन से बकरा काटना सिखाया जाता है।... हिन्दू परिवार–नियोजन करता है, जबकि मुसलमान चार शादियाँ करके अपनी गिनती बढ़ा रहा है और दस साल में वह बहुसंख्यक हो जायेगा, हिन्दू अल्पसंख्यक।... मुसलमान देश में एक और विभाजन की तैयारी कर रहा है, जिसके नक्शे बन चुके हैं।...कोई मुसलमान 'वन्दे मातरम्' नहीं बोलता, कोई 'जय हिन्द' नहीं बोलता... सब सरकारें वोट के लिए मुसलमानों के तलुवे चाटती हैं, हिन्दुओं को उनके सामने अपमानित करती हैं,...इन सब मुसीबतों का सिर्फ एक हल है...हिन्दू राष्ट्र, सरकार...हिन्दू धर्म हो, जहाँ मुसलमानों की कोई जगह न हो... वगैरह वगैरह।''

प्रियंवद मानते हें कि धर्म अमानवीय नहीं बनाता। सच्चा धार्मिक साम्प्रदायिक नहीं होता। 'वे वहाँ कैद है' धर्म के नष्ट एवं भ्रष्ट हाथों में पड़कर साम्प्रदायिक होने एवं अपना हित साधने के लिए कुछ भी कर गुजरने को विमर्श के स्तर पर प्रस्तुत करता है।

स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद भारतीय उपन्यास परिदृश्य में हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धों के दृष्टिकोण से अन्य कई उपन्यास महत्त्वपूर्ण हैं जिसमें देवेन्द्र सत्यार्थी

का कठपुतली, नासिरा शर्मा का ठीकरे की मँगानी, जिन्दा मुहावरे, रामदरस मिश्र का जल टूटता हुआ, शिवप्रसाद सिंह का अलग अलग वैतरणी, गौरी शंकर कपूर का उल्का साकेत, राजीव कुमार का टुकड़े, भगवान सिंह का उन्माद, भगवाद दास मोरवाल कृत काला पहाड़, ज्योतिष जोशी कृत सोन बरसा, कमलेश्वर कृत कितने पाकिस्तान, असगर वजाहत कृत सात आसमान, कैसी आगी लगायी, अब्दुल बिस्मिल्लाह कृत मुखड़ा क्या देखे आदि प्रमुख हैं। इन उपन्यासों में भारत–विभाजन, शरणार्थी समस्या, साम्प्रदायिक दंगे, भाषायी विवाद, हिन्दू एवं मुस्लिम मानस में हो रहे परिवर्तनों को रेखांकित करने की कोशिश की गयी है। उपन्यासकारों की दृष्टि साम्प्रदायिकता के प्रति कटु, अतिशय मानवतापूर्ण एवं प्रजातान्त्रिक मूल्यों से प्रेरित हैं स्वतन्त्र भारत के हिन्दी उपन्यासों में हिन्दू–मुसलमान सम्बन्धों को रचनात्मक आयाम प्रदान करते हुए उपन्यासकारों ने धार्मिक संकीर्णताओं पर प्रहार करते हुए उपन्यासकारों ने धार्मिक संकीर्णताओं पर प्रहार किया है और सामाजिक समस्याओं के मूल में जाने की कोशिश की हैं राही मासूम रजा इस दौर में ऐसे रचनात्मक रहे हैं जिनके सम्पूर्ण साहित्य में हिन्दू–मुसलमान–विमर्श उपस्थित है। उनका समग्र ध्यान इन सम्बन्धों के वास्तविकता की व्याख्यायित करने में रहा है। वे भारतीयता के पक्षधर रहे हैं। उनके सम्पूर्ण साहित्य में भारतीय संस्कृति की अविरल एवं अखण्ड धारा को समझने का प्रयास है, जिसे हम अगले अध्याय में परखने की कोशिश करेंगे।

संदर्भ ग्रंथ–सूची :–

1. असगर अली इंजीनियर, भारत में साम्प्रदायिकता : इतिहास और अनुभव।
2. अभय कुमार दुबे, क्षेत्रीय समर्थन की तलाश में हिन्दुत्व, साम्प्रदायिकता के स्त्रोत।
3. विपिनचन्द्र, आजादी के बाद का भारत।
4. राही मासूम रजा, सिनेमा और संस्कृति।
5. रामानन्द सागर, और इंसान मर गया।
6. चमनलाल, कथा आलोचना, शताब्दी कथा साहित्य।
7. हरिमोहन शर्मा,विभाजन की त्रासदी की महागाथा।
8. नासिरा शर्मा, भारतीय मुस्लिम समाज और झूठा सच, भारतीय साहित्य।
9. भैरवप्रसाद गुप्त, सती मैया का चौरा।
10. कुँवरपाल सिंह, सती मैया का चौरा, जनसंघर्ष के आयाम
11. राजेश्वर सक्सेना, इतिहास कथा और भैरव प्रसाद गुप्त के उपन्यास।
12. माधुरी शाह, कमलेश्वर का कथा साहित्य।
13. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास।
14. भीष्म साहनी, तसम : संस्मरण : आधुनिक हिन्दी उपन्यास।